रोज़-रिंग्ड पेराकीट और उनके रिश्तेदार

विपुल कीर्ति शर्मा

बात सात-आठ साल पुरानी है। मैं लम्बी ट्रेन यात्रा से उत्तरप्रदेश जा रहा था। वैसे तो भारतीय ट्रेन में सफर एक रोमांचक अनुभव होता ही है जहाँ तरह-तरह के लोग, तरह-तरह की बातें, व्यवहार, व्यंजन, धर्म, चालाकी, अकेलापन सब देखने को मिल जाते हैं, जो सफर को और यादगार एवं रोमांचक बना देते हैं। मैं ट्रेन के आखरी डिब्बे में था और ट्रेन, सिग्नल न मिलने के कारण आधे घण्टे से गाँव के परिवेश वाले प्लेटफॉर्म पर रुकी हुई थी। प्लेटफॉर्म के अन्त में अनाज की बोरियों को जमाकर रखे गए पहाड़ पर तोतों ने हमला-सा कर दिया था। सैकड़ों की तादाद में वे अपनी चोंच से दाना बटोर रहे थे। अचानक तोतों की आवाज़ तेज़ हो गई और इस वजह से उन्होंने मेरा ध्यान भी खींच लिया। अनाज की बोरियों के बीच, एक चूहे को खोजते रेट-स्नेक ने एक तोते को अपनी गिरफ्त में ले लिया था। अपने साथी तोते को फड़फड़ाता देख अनेक तोतों ने उड़ते-उड़ते साँप की पूँछ को चोंच से काटना शुरू कर दिया। तोतों के इस अचानक हमले से साँप ने तुरन्त ही शिकार को छोड़ा और अनाज की बोरियों के बीच गायब हो गया। भोजन शृंखला का यह सदृश्य उदाहरण काफी रोमांचक था।

तोता या रिंग-नेक्ड पेराकीट

आम भाषा में जिन्हें हम तोता, पोपट, मिट्ठू, पेरट आदि नाम से पुकारते हैं, उनका अँग्रेज़ी नाम रोज़-रिंग्ड पेराकीट या रिंग-नेक्ड पेराकीट है और वैज्ञानिक नाम *सिटेक्युला क्रामरी*। यह भारत की सबसे ज़्यादा दिखने वाली दस पक्षी प्रजातियों में से एक है। अनेक घरों में तो इन्हें पिंजरे में पालकर भी रखा जाता है। ये शहरों-गाँवों और जंगलों में बहुत आसानी-से देखे जा सकते हैं। आप भले ही इन पर ध्यान न दें परन्तु शोर करने की आदत या इनके बातूनी व्यवहार के कारण ये आपका ध्यान बरबस खींच ही लेंगे।

तोते मध्यम आकार के होते हैं। नर और मादा को आप आसानी-से पहचान सकते हैं। वयस्क नर के गले में लाल और काले रंग का पट्टा होता है जबकि मादा (हेन) और अवयस्क तोते में पट्टा प्रायः अनुपस्थित रहता है या कभी-कभी हल्के धूसर रंग का पट्टा दिखता है। मुड़ी हुई लाल चोंच और हरे रंग से इन्हें कोई भी पहचान सकता है।

ये मध्य अफ्रीका और एशिया के मूल निवासी हैं इसलिए अनेक देशों में फैले हुए हैं। बातूनी और आसानी-से पालतू बन जाने की खूबी के कारण ये अनेक देशों में पहुँच गए और फिर दुर्घटना या पिंजरों से बाहर आ जाने के कारण विश्व के एक बड़े भूभाग पर फैल गए। अनुकूलन की अद्भूत क्षमता के कारण ये यूरोप और अमेरिका के बेहद ठण्डे से लेकर गर्म इलाकों तक में फैलते जा रहे हैं। उन देशों में जहाँ के ये मूल निवासी नहीं हैं, वहाँ इन्हें बाहरी (इनवेसिव)

चित्र-1: *रोज़-रिंग्ड पेराकीट में नर व मादा को आसानी-से पहचाना जा सकता है। नर के गले पर पट्टा होता है, जबकि मादा के गले पर यह पट्टा अनुपस्थित होता है।*

प्रजाति मानकर इनकी आबादी का बढ़ना स्थानिक प्रजातियों के लिए खतरा समझा जा रहा है।

रोज़-रिंग्ड पेराकीट तीन साल की आयु में वयस्क होते हैं और तब इन्हें आसानी-से नर और मादा के रूप में पहचाना जा सकता है। नर मादा से कुछ बड़े होते हैं। नर की लम्बाई औसतन 40 सेंटीमीटर और वज़न 135 ग्राम होता है। शरीर की कुल लम्बाई से लम्बी तो इनकी पूँछ होती है।

इनका मुख्य आहार बीज और अनाज हैं इसलिए मुख्य रूप से ये बीजहारी कहलाते हैं। इनके बड़े समूह अनाज एवं फसलों को तबाह कर देते हैं। अनाज के अलावा ये अनेक प्रकार के फल, कीट-पतंगे और फूलों का रस भी खाते हैं। इन्हें अक्सर एक पैर से फल को पकड़कर, मुड़ी चोंच से उसका गूदा निकालकर खाते देखना बड़ा मज़ेदार लगता है। ये स्वभाव के बहुत चंचल होते हैं। अधिकांश पक्षी जहाँ चुपचाप बैठे रहते हैं, वहीं पेराकीट डाल पर लटकते, शोर मचाते, पंख फड़फड़ाते, उड़ते, फिर से बैठते और अठखेलियाँ करते दिख जाते हैं। पिंजरों में पाले जाने वाले पेराकीट को हरी मिर्च भी दी जाती है। इन पक्षियों की जिव्हा में मिर्च का तीखापन महसूस करने वाली स्वाद कलिकाएँ नहीं होतीं, इसलिए उन्हें मिर्ची तीखी नहीं लगती।

भारत में पहाड़ी मैना और रोज़-रिंग्ड पेराकीट को मनुष्य की आवाज़ की नकल करने की अद्भुत क्षमता के कारण पिंजरों में पाला जाता है।

गण सिटासिफॉर्मिस में 350 प्रकार के रंगीन पक्षियों को रखा गया है। इस गण में 4 से 40 इंच तक के आकार के पक्षी रखे गए हैं। इनकी चोंच नीचे की ओर झुकी हुई होती है। पैरों की कुल चार में से दो उंगलियाँ आगे तथा दो पीछे की तरफ होती हैं। जीभ पेशीयुक्त होती है। खोपड़ी से दोनों जबड़े इस प्रकार से जुड़े होते हैं कि मांसल जीभ हर दिशा में घूमकर भोजन को अच्छी तरह से काटने में मदद करती है। अधिकांश प्रजातियाँ मुख्यतः बीजभोगी होती हैं किन्तु ये फल और कीट भी मज़े से खाते हैं। इस गण के सदस्य पूरे विश्व में फैले हुए हैं।

प्रजनन व चूज़ों का पालन-पोषण

रोज़-रिंग्ड पेराकीट एक मौसमी प्रजनक प्रजाति है। ये मोनोगेमस होते हैं। मतलब एक प्रजनन ऋतु में एक नर, एक ही मादा के साथ प्रजनन करता है। नई प्रजनन ऋतु में साथी बदले जाते हैं। ये सितम्बर से जनवरी में जोड़े बनाते हैं तथा प्रजनन करते हैं। पेराकीट्स में मादा, नरों को आकर्षित करती है और मादा के इरादों को भाँपकर नर अपनी पूँछ के पर फैलाकर और सिकोड़कर अपनी खूबसूरती दर्शाता

है। ऐसे समय नर अपनी आँखों के प्यूपिल को भी छोटा-बड़ा करता है। नर मादा को उपहार में चोंच से भोजन भी देता है। मादा भी आँखें मटकाकर चोंच से चोंच लड़ाती है। इस प्रकार प्रजनन काल में इनकी प्रणय लीला चलती रहती है।

तोते पेड़ की खोह, पुरानी इमारतों तथा किलों में घोंसले बनाते हैं। ये प्रायः पेड़ों के तने में बने कठफोड़वे या बारबेट के बिल को चौड़ा करके, अपने अधिकार में ले लेते हैं। शोर-शराबे वाले शहरी इलाके की पुरानी इमारतें भी इनसे अछूती नहीं रहतीं। इनका घोंसला गहरा होता है और कई बार घोंसले में सात अण्डे भी देखे गए हैं। किन्तु औसतन ये सफेद रंग के चार अण्डे देते हैं। मादा तीन सप्ताह तक अण्डों को सेती है। इस दौरान नर मादा को खाना खिलाते हैं। परविहीन नंगा शरीर और बन्द आँखों के चूज़ों को नर एवं मादा, दोनों खिलाते हैं। यह क्रम 7-8 सप्ताह तक चलता है। नर एवं मादा आंशिक रूप से पचित भोजन को उल्टी करके चूज़ों को खिलाते हैं। यही समय होता है जब तोतों को बेचने वाले शिकारी पेड़ पर चढ़कर उनके बच्चों को निकाल लेते हैं और पिंजरों में बन्द करके बेच देते हैं। जंगलों में अधिक प्रजनन सफलता के कारण ये एक सफल पक्षी प्रजाति के रूप में उभरे हैं। घोंसलों से निकलने के बाद भी किशोर पेराकीट दो साल तक माता-पिता के साथ बने रहते हैं। रोज़-रिंग्ड पेराकीट का जीवनकाल लम्बा होता है। ये पिंजरों में भी 35 साल तक जीवित रहते हैं इसलिए इनको पालना आसान होता है।

अक्सर पिंजरों में पाले जाने वाले पेराकीट अकेले ही रखे जाते हैं। इसका कारण यह है कि मादा काफी गुस्सैल होती है। पिंजरे में बन्द मादा को यदि नर साथी अच्छा नहीं लगता है तो वह हमला करके उसे घायल कर देती है। यह व्यवहार मादा द्वारा इलाके बनाने यानी अपने क्षेत्र पर अधिकार जताने की प्रवृत्ति को इंगित करता है।

कौन है एलेक्स?

भारत में सामान्य रूप से दिखने वाली पेराकीट प्रजातियों में रोज़-रिंग्ड पेराकीट के अलावा अलेक्ज़ेंड्रिन पेराकीट *(सिटेक्युला युपेट्रीया)* और प्लम-हेडड पेराकीट *(सिटेक्युला साइनोसिफेला)* आसानी-से दिख जाते हैं। इनके अलावा ब्लूविंग्ड पेराकीट *(सिटेक्युला कोलम्बोइड़स)* तथा अण्डमान एवं निकोबार आइलैण्ड की दो प्रजातियाँ रेडचिक्ड पेराकीट और निकोबार पेराकीट भी पक्षी प्रेमियों के बीच काफी प्रसिद्ध हैं।

किन्तु विश्व में सबसे ज़्यादा प्रसिद्धि पाने वाले तोते का नाम ‘एलेक्स’ है। वह असाधारण क्षमताओं वाला अफ्रीकन ग्रे पेरट था। वैज्ञानिकों को लगता था कि मानव के बाद

चित्र-2: अलेक्ज़ेंड्रिन पेराकीट

चित्र-3: प्लम-हेडड पेराकीट

सबसे ज़्यादा अक्लमन्द चिम्पांज़ी, गोरिल्ला आदि एप (ape) होते हैं और स्तनधारियों के अलावा अन्य जन्तु समूहों की मानसिक क्षमता इतनी विकसित नहीं है कि उनकी तुलना मनुष्य से की जा सके। किन्तु पेरट एलेक्स ने वैज्ञानिकों की इस गलतफहमी को झुठला दिया। एलेक्स के बुद्धि प्रदर्शन और बातचीत कौशल ने पक्षियों की बौद्धिक क्षमता के बारे में वैज्ञानिकों की धारणा ही बदल दी। एलेक्स की इसी खूबी के कारण 1970 के प्रारम्भ से अगले तीन दशक तक वह मीडिया के आकर्षण का केन्द्र रहा। वन्य प्राणियों पर आधारित वृत्तचित्रों के प्रदर्शन में एलेक्स को प्रश्नों के जवाब देते, रंग और ज्यामिति आकारों में भेद करते, सरल प्रकार का गणित हल करते और बातों द्वारा क्रोध, प्यार और उबाऊपन की भावनाओं को व्यक्त करते हुए दिखाया जाता था जो अक्सर पाँच वर्ष का मानव बालिका/बालक करता है। श्रोता और दर्शक ऐसे अद्‌भुत कमाल देखकर दाँतों तले उँगली दबा लेते थे।

एलेक्स को प्रशिक्षण देने का श्रेय डॉ. आयरीन पेपरबर्ग को जाता है। आइरीन मैक्सिन पेपरबर्ग एक ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक हैं जो तोतों की

सीखने की क्षमता पर कार्य करती हैं। वे अनेक विश्वविद्यालयों में प्राध्यापक रहीं और वर्तमान में हार्वर्ड विश्वविद्यालय में शोध सहयोगी और व्याख्याता के रूप में कार्य कर रही हैं। वे प्रथम वैज्ञानिक हैं जिन्होंने जन्तुओं द्वारा भाषा सीखने के व्यवहार पर तुलनात्मक शोध किया है। एलेक्स और पेपरबर्ग का साथ तीस वर्षों तक रहा। उन्होंने 1977 में एक पेट स्टोर से अफ्रीकन ग्रे पेरट खरीदा। वे इसके साथ कुछ प्रयोग करना चाहती थीं। उन्होंने अपने इस तोते का नाम 'एलेक्स' रखा। एलेक्स के प्रशिक्षण के दौरान ही उन्हें इसकी सीखने की क्षमता का भान हो गया था। एलेक्स ने कुछ ही वर्षों में 100 शब्द सीख लिए थे और वह रंग, आकार और अक्षरों को सोच-समझकर सही बताता था।

एलेक्स का प्रशिक्षण व दिक्कतें

एलेक्स को सिखाने के लिए पेपरबर्ग ने 'रायवल (प्रतिद्वन्द्वी) मॉडल' तकनीक का इस्तेमाल किया। सिखाने के इस तरीके में एलेक्स की एक शोधार्थी प्रतिद्वन्द्वी छात्र के रूप में एलेक्स के सामने खड़ी रहती थी। एलेक्स और शोधार्थी से एक प्रश्न पूछा जाता था। सही उत्तर देने वाले को पुरस्कार के रूप में एक वस्तु मिलती थी। पुरस्कार का लालच एलेक्स को सीखने पर मजबूर करता था। प्रमुख बात यह थी कि पुरस्कार के रूप में भोजन देने की बजाय एलेक्स को कोई वस्तु दी जाती थी।

फोटो: इंटरनेट से साभार।

चित्र-4: वैज्ञानिक आइरीन मैक्सिन पेपरबर्ग और एलेक्स। एलेक्स रंग, आकार और अक्षरों को सोच-समझकर सही बताता था।

फोटो: इंटरनेट से साभार।

चित्र-5: वैज्ञानिक पेपरबर्ग ने अपने तोते का नाम भी अपने परीक्षण यानी Avian Learning EXperiment *के आधार पर* ALEX *रखा था।*

कुछ ही समय में एलेक्स सीखकर इतना निपुण हो गया था कि अन्य तोतों को प्रशिक्षण देने में वह शोधार्थी तक की भूमिका अदा करने लगा था और दूसरे तोते को गलती करने पर सुधारता था। उसके द्वारा चयनित शब्द केवल तोता रटन की बजाय सोचे-समझे लगते थे। जब वह कोई गलती करता था तो ‘आई एम सॉरी’ कहता था और जब दर्शकों के सामने उसका प्रदर्शन सत्र उबाऊ होने लगता था तो वह कहता था कि मुझे ‘वापस जाना है’। बोरियत होने के बावजूद उस पर यदि प्रशिक्षण के लिए दबाव बनाया जाता था तो सही उत्तर जानते हुए भी वह जानबूझकर गलत उत्तर बताकर सत्र को खत्म करने का प्रयास करता था।

एलेक्स को प्रशिक्षण देना कोई आसान कार्य नहीं था। शोध करने और वित्तीय सहायता प्राप्त करने के लिए पापड़ बेलने पड़ते हैं। पेपरबर्ग ने अपने शोध को सतत चलाने के लिए अनेक प्रोजेक्ट बनाए किन्तु उनमें से अधिकांश को अस्वीकृत कर दिया गया क्योंकि प्रोजेक्ट चयन समिति के सदस्यों को पक्षियों का सीखना रटना लगता था। आखिरकार अनेक प्रयासों के बाद पेपरबर्ग के शोध को स्वीकार कर लिया गया। पर 2007 में जब यह खुशखबर उन्हें मिली तब तक एलेक्स की मृत्यु हो चुकी थी। पेपरबर्ग ने एलेक्स की मृत्यु पर एक श्रद्धांजलि कार्यक्रम भी आयोजित किया था। विश्वभर के प्रमुख समाचार पत्रों ने एलेक्स के कार्यों और मृत्यु को प्रमुखता से छापा – श्रद्धांजलि का ताँता लग गया था।

ब्राज़ील का स्पिक्स मैकॉ

लिटिल ब्लू मैकॉ, या स्पिक्स मैकॉ *(सायनोप्सिटा स्पक्सी)* ब्राज़ील में पाए जाने वाले सुप्रसिद्ध मैकॉ तोतों की प्रजाति है। ये उपकुल एरिनी के

सदस्य हैं जिसमें नियोट्रॉपिकल पेरट्स को रखा गया है। मैकॉ (मैकॉव में 'व' नहीं बोला जाता है) न्यू वर्ल्ड पैरट का एक समूह है जिसमें अक्सर बेहद सुन्दर और लम्बी पूँछ वाले तोते होते हैं। ये शौकिया तोते पालने वालों के बीच काफी प्रसिद्ध हैं इसलिए इनके प्राकृतिक आवास से इन्हें चुराकर विदेशों में ऊँची कीमत पर बेचा जाता है। विदेशी पालतू जानवरों का व्यापार अत्याधिक लाभदायक है और माना जाता है कि इस अवैध उद्योग ने तोतों की 66 प्रजातियों के अस्तित्व को जंगलों से मिटाने में भूमिका निभाई है। स्पिक्स मैकॉ इनमें प्रमुख हैं। ये मध्यम आकार के तोते होते हैं। अधिकांश प्रकार के मैकॉ को सर्वप्रथम 1819 में ब्राज़ील के पूर्वोत्तर बाहिया में खोजा गया था। इनका शरीर नीले रंग का तथा सिर ग्रे-नीले रंग का होता है। मादा, नर से थोड़ी छोटी होती है किन्तु लैंगिक द्विरूपता स्पष्ट नहीं होती। घोंसले, भोजन और आवास के लिए निश्चित पेड़ों पर निर्भरता इनके जंगल से विलुप्त होने का मुख्य कारण है। ये मुख्य रूप से कैराइबा के बीज से मेवे निकालकर खाते हैं।

चित्र-6: स्पिक्स मैकॉ का जोड़ा।

वनों की कटाई के कारण भोजन और आवास का खत्म होना, बीसवीं शताब्दी में इनकी जंगली आबादी में कमी का प्रमुख कारण बना। सन् 2016 में जंगल में आखरी स्पिक्स मैकॉ दिखने के प्रमाण मिले हैं। किन्तु 1980 में ही इनके प्राकृतिक आवासों की पहचान और गिरती आबादी ने सरकार को सावधान कर दिया था। जंगलों में स्पिक्स मैकॉ खत्म हो जाने के बावजूद प्राणी संग्रहालय (ज़ू) और शौकिया मैकॉ पालने वालों के पास काफी संख्या में इनकी आबादी बच गई थी। लगभग 100 पालतू लिटिल ब्लू मैकॉ से प्रारम्भ करके वैज्ञानिक प्रयासों से सन् 2020 तक इनकी आबादी को 180 तक लाया जा सका है। जर्मनी के एक शोध सेंटर में अब कृत्रिम गर्भाधान तकनीक से इनकी आबादी फलने-फूलने लग गई है। इसी बीच ब्राज़ील सरकार ने पिछले बीस सालों में मैकॉ के प्राकृतिक आवास में से एक वृहत क्षेत्र को फिर से ब्लू मैकॉ के प्राकृतिक आवासों में विकसित भी किया है। सन् 2021 में ब्लू मैकॉ को वापस प्राकृतिक आवासों

में छोड़ने की योजना थी। इस योजना के तहत 2020 में 52 ब्लू मैकॉ जर्मनी से ब्राज़ील पहुँचाकर, एक वर्ष तक उन्हें ब्राज़ील में जाली से ढके बड़े बाड़े में छोड़ा गया था जिससे वे अपने प्राकृतिक आवास में ढल सकें और जीवन यापन कर पाएँ।

पिंजरों में जन्म लिए और पले-बढ़े मैकॉ और प्राकृतिक आवासों में पले-बड़े मैकॉ में बहुत अन्तर होता है। आश्रय स्थलों में ब्लू मैकॉ को पालने वाले भोजन देते हैं जबकि प्राकृतिक स्थलों पर भोजन खोजना, शिकारियों से स्वयं की रक्षा, प्रजनन के लिए पेड़ों की खोह खोजना, बच्चों को नर-मादा द्वारा पालना आदि व्यवहार को सीखना और परिष्कृत करना होता है।

यह प्रोजेक्ट भारत के कुनो राष्ट्रीय उद्यान (मध्यप्रदेश) में फिर से अफ्रीकी चीते छोड़ने जैसा ही है। भारत में आखरी चीता 1947 में छत्तीसगढ़ में मारा गया था और 1952 में इन्हें विलुप्त घोषित कर दिया गया था। मुख्य बात तो यह है कि न तो चीते प्राणी संग्रहालय में बच पाए, न ही शौकिया पालने वालों के पास। इसलिए अफ्रीकी चीतों को भारत में लाने का प्रयास किया जा रहा है जो जंगल में ही पले-बढ़े हैं।

ब्लू मैकॉ को आप 2011 में हॉलीवुड में निर्मित कार्टून फिल्म 'रियो' में भी देख सकते हैं।

वुडलैंड उष्णकटिबन्धीय दक्षिण

चित्र-7: ब्लू-एंड-येलो मैकॉ

अमेरिका के सवाना में मैकॉ की एक और प्रजाति पाई जाती है जो अपने आकर्षक रंग, बातूनी व्यवहार, लम्बी आयु और बड़े आकार के कारण प्रसिद्ध है। ये हैं ब्लू-एंड-येलो मैकॉ *(आरा अरारुना)* जिन्हें ब्लू-एंड-गोल्ड मैकॉ के रूप में भी जाना जाता है। सर्वप्रथम 1818 में इन्हें ऑस्ट्रिया के एक प्रकृतिविद ने ब्राज़ील के रियो में उड़ते हुए देखा था। शहरीकरण ने इन्हें वहाँ से मिटा दिया। पैराग्वे में भी इनकी आबादी पूरी तरह से नष्ट हो गई। किन्तु बड़े इलाके में फैलाव होने के कारण पैराग्वे में इन्हें पुनः भेजा और बसाया जा रहा है।

तोतों की कुछ अन्य प्रजातियाँ

ऑस्ट्रेलिया महाद्वीप में और आसपास के कुछ अन्य छोटे द्वीप देशों के यूकेलिप्टस और पाइन के जंगलों में, पर्वतीय क्षेत्रों और मेंग्रोव की ढलानों पर कॉकाटील नामक

तोते पाए जाते हैं। इनकी 21 प्रजातियाँ हैं। इन्हें काकाटुईडी कुल में रखा गया है। ये ऐसे तोते हैं जिनकी नीचे झुकी और मुड़ी चोंच के साथ सिर पर कलगी भी होती है। इच्छानुसार ये कलगी को खड़ा कर सकते हैं। अन्य तोतों की तुलना में इनका शरीर अनेक रंगों वाला न होकर एक ही रंग का होता है। अक्सर ये सफेद और काले रंग के होते हैं। इन पक्षियों को भी पालतू बनाने के प्रचलन की वजह से जंगलों से पकड़ा एवं बेचा जाता है। कॉकटू की पाँच प्रजातियाँ गोफिन्स कॉकटू, लेसर सल्फर कॉकटू, पाम कॉकटू, रेड-वेंटेड कॉकटू और मोलुकन कॉकटू विलुप्त होने की कगार पर हैं और अन्य सभी प्रजातियाँ भी जंगलों में खतरे में हैं।

चित्र-8: कॉकाटील

छोटे आकार के तोतों में बजरीगर भी बहुत प्रसिद्ध हैं। मेलोसिट्टाकस वंश में बजरीगर अकेली प्रजाति है। ऑस्ट्रेलिया के प्राकृतिक आवासों में ये छोटे आकार के तोते हरे-पीले रंग में मिलते हैं। पालतू पक्षी विक्रेताओं ने इन्हें कैद करके वंश वृद्धि कराई और अनेक रंग और बड़ा आकार उत्पन्न कर लिया है। पालतू पशु-पक्षियों में कुत्ते, बिल्ली के बाद शायद इनका नम्बर ही आता है।

तोतों की बातूनी आदत, सुन्दरता और लम्बी आयु इनके लिए परेशानी का सबब भी बन गई है। अनेक तोतों की प्रजातियाँ जंगल से विलुप्त होकर केवल पिंजरों में पल रही हैं। जीन-पूल की कमी के कारण ये अन्तः प्रजनन करने पर मजबूर हैं। ऐसी प्रजातियों को बचाए रखना वैज्ञानिकों के लिए एक चुनौती होगा।

विपुल कीर्ति शर्मा: शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर में प्राणिशास्त्र के वरिष्ठ प्रोफेसर। इन्होंने 'बाघ बेड्स' के जीवाश्म का गहन अध्ययन किया है तथा जीवाश्मित सीअर्चिन की एक नई प्रजाति की खोज की है। नेचुरल म्यूज़ियम, लंदन ने सम्मान में इस प्रजाति का नाम उनके नाम पर *स्टीरियोसिडेरिस कीर्ति* रखा है। वर्तमान में, वे अपने विद्यार्थियों के साथ मकड़ियों पर शोध कार्य कर रहे हैं।

सभी फोटो: विपुल कीर्ति शर्मा।